श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी

का

राष्ट्रचिंतन

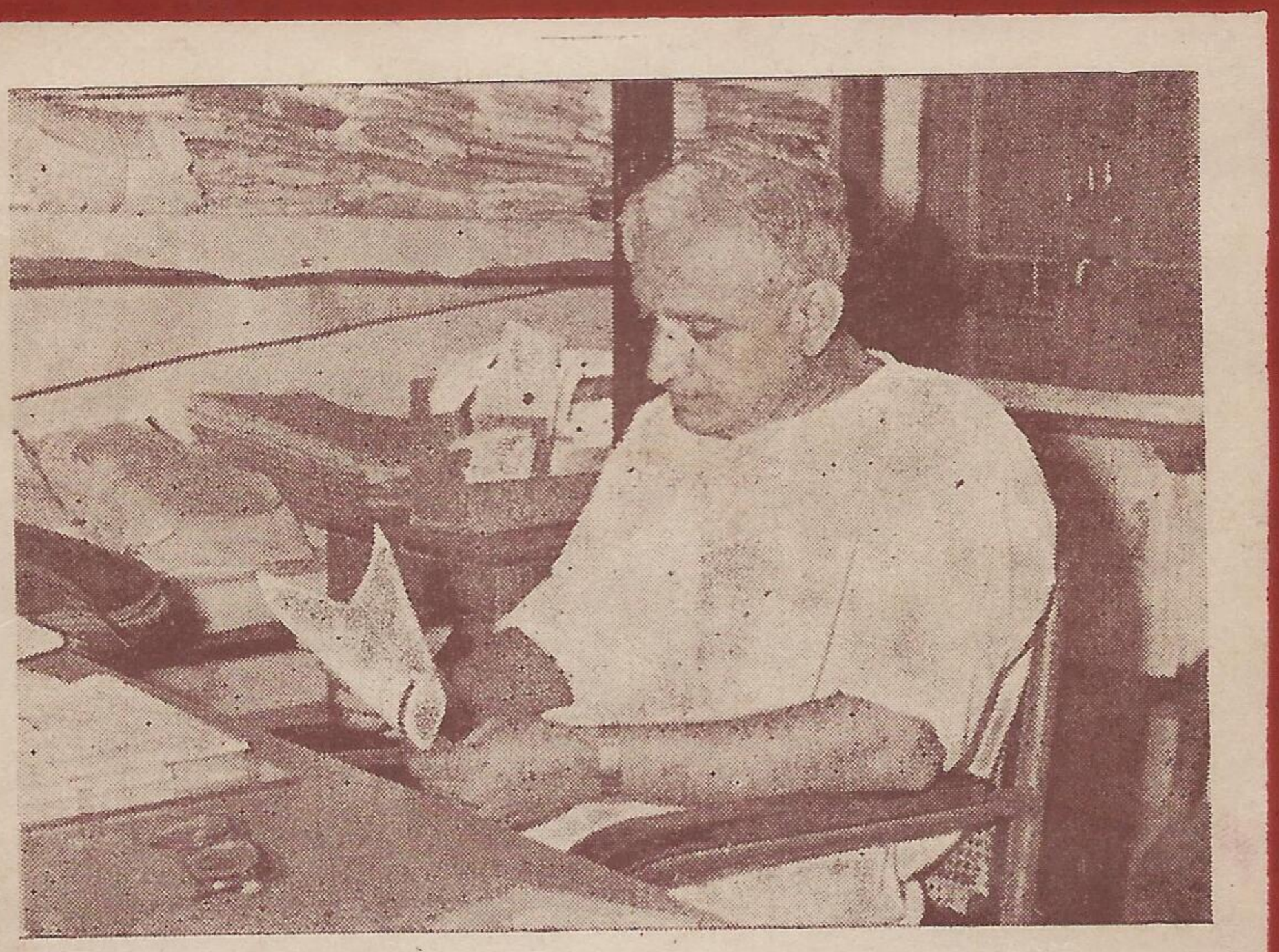

- राष्ट्र का आत्मविश्वास
- हिन्दुत्व की धारणा
- राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का आधार
- कम्युनिज्म अपने ही कसौटी पर
- पिछड़े बंधुओं की समस्या
- संघे शक्तिः

अध्याय ५

पिछड़े बन्धुओं की समस्या

आजकल दलित, पीड़ित बन्धुओं की समस्याएँ सुलझाने के लिये उन पर होने वाले अन्याय दूर करने के लिये अनेक वक्तव्य, लेख दिये जा रहे हैं। प्रचार, प्रयत्न चल रहे हैं। किन्तु ऐसा दीख रहा है कि जितना यह प्रचार अधिक हो रहा है उतनी ही इस समस्या की गंभीरता एवं भीषणता बढ़ रही है। दवा दी जा रही है और रोग बढ़ता जा रहा है। इसका क्या कारण हो सकता है ? इस प्रश्न की ओर देखने के दृष्टिकोण में तो कहीं त्रुटि नहीं है ? ऐसा विचार मन में आता है।

प्रश्न सुलझाने की सद्भावना होते हुए भी किसी प्रश्न पर यदि नकारात्मक भूमिका ली गई तो मूल उद्देश्य से विपरीत परिणाम सामने आते हैं। जाति संस्था अन्यायपूर्ण बन गयी है, इसलिये उसे मात्र नष्ट करने का प्रयत्न करने पर जाति–भावना को और बल मिलता है। जाति संस्था नष्ट करने का प्रयत्न करने वालों की ही एक जाति बन जाती है। एक जादूगर ने घोषणा की, कि उस की जादू की लकड़ी पानी में इक्कीस बार घुमाने पर पानी सोने में बदल जायगा, किन्तु एक शर्त पर कि लकड़ी घुमाते समय बन्दर का मुख नजर के सामने नहीं आना चाहिए। अब जो भी लकड़ी घुमाने बैठता, शर्त मालूम होने के कारण अवश्य बन्दर का मुख उसकी नजर के सामने आता। वह स्वाभाविक ही सोचने लगता कि, "जादू तो ठीक है, किन्तु गलती मेरी ही है कि मैं शर्त पूरी नहीं कर पा रहा हूं।" इसी प्रकार नकारात्मक धारणा से कई बार काम बिगड़ता है। यही स्थिति पिछडे हुए बन्धुओं की समस्या पर विचार करते हुए, कई लोगों की हो जाती है।

इसका दूसरा पक्ष भी है। नकारात्मक दृष्टिकोण न रखते हुए क्या विधायक दृष्टिकोण (Positive approach) से यह समस्या सुलझाने की गुंजाईश कहीं है ? जाति भेद का वातावरण इतना उग्र हो गया है कि क्या उसे सुनने भी कोई तैयार रहेगा ? आज कोई किसी की सुनने तैयार नहीं है। निराशाजनक स्थिति है।

कुछ आशादायी बातें

फिर भी, आज की स्थिति में भी कुछ आशादायी बातें (Saving features) अवश्य प्रतीत होतीं हैं। एक है कि कुछ जीवन मूल्य आज भी आदरणीय माने जाते हैं– जैसे सत्चारित्र्य, सद्गुण, साधना, प्रामाणिकता आदि। स्वयं काला बाजारी करने वाला भी चाहता है कि उसका मुनीम प्रामाणिक होना चाहिये। छोटी संकीर्ण भावनाओं की लहरों के नीचे से, आज भी सांस्कृतिक जीवन मूल्यों के प्रति श्रद्धा एवं सम्मान की भावना प्रवाहित होते दीखती है, जो कि एक अच्छा लक्षण है। अतएव निःस्वार्थ बुद्धि से

सम्पूर्ण समाज के प्रति अपनत्व का भाव रखते हुए निरपेक्ष सेवा करने वाले कार्यकर्ता की कदर आज भी होती है, चाहे जितनी जातिवाद आदि संकुचित भावना का दौर चला हो।

दूसरा आशादायी लक्षण है कि आज फूट-परस्ती की मनोभूमिका के होते हुए भिन्न-भिन्न विचार एवं दृष्टिकोण रखने वाले भी समान संकट या समस्या को लेकर एकत्रित हो जाते हैं। १९६२ का चीन का आक्रमण, १९६५ एवं १९७१ का भारत-पाकिस्तान संघर्ष आदि समान प्रश्नों के समय सारे मतभेद भुलाकर सम्पूर्ण जनता कन्धे से कन्धा लगाकर खड़ी हो गयी थी। इस प्रकार की जागृति तथा एकता यद्यपि तात्कालिक एवं अल्पजीवि रही, समान विषय को लेकर संगठित होने की सम्भावना अपने समाज में विद्यमान है, यह भी एक शुभ लक्षण है।

समान उद्देश्य

अतः यह सोचने की बात है कि ऐसा कौन-सा समान विषय, समान उद्देश्य अपने समाज के सामने स्थायी रूप से प्रस्तुत किया जाय, जिस के महत्व को समझते हुए संकीर्णता से, भेदभाव से, विद्वेष से ऊपर उठकर सभी लोगों में एकता तथा संगठन की प्रेरणा जाग सके। अपने देश की राष्ट्रीयता के सूत्र को कमजोर करने के लिये विदेशियों ने तरह-तरह के संभ्रम पैदा किये, जैसे आर्य भारत में बाहर से आये, वेद मात्र ब्राह्मणों का साहित्य है आदि। डा. बाबासाहेब आंबेडकर जी ने स्वयं अपने सप्रमाण तर्क द्वारा इन भ्रमों को दूर करते हुए कहा कि आर्य शब्द जातिवाचक नहीं, मात्र गुणदर्शक है, वेदों की रचना में सभी वर्णों का योगदान है, यहां तक कि गायत्री जैसा श्रेष्ठ मन्त्र ऋषि विश्वामित्र ने सिद्ध किया है। जो ब्राह्मण नहीं थे। आप ने कहा है कि वेदकाल में अस्पृश्यता नहीं थी, उपनिषद् काल में भी नहीं थी। मनुस्मृति के समय भी अस्पृश्यता नहीं थी, जो नियम थे वे सभी वर्णों को समान थे। जिसने भी कोई सामाजिक अपराध किया है, उस पर कुछ दिन बहिष्कार किया जाता था, भले वह ब्राह्मण भी क्यों न हो। यह विवरण प्रमाणित करते हुए डा. आंबेडकरजी ने लिखा है कि सम्राट चन्द्रगुप्त के कालखण्ड में किसी समय अस्पृश्यता की रूढ़ि प्रारम्भ हुई, जिसके कारण विशिष्ट ऐतिहासिक घटनाओं में निहित हैं। किन्तु एकराष्ट्रीयत्व की मौलिक भूमिका में आज भी उसके कारण कोई कमी आना उचित नहीं है।

एकराष्ट्रीयता

५ फरवरी १९५० में संविधान समिति की बैठक में डा. आंबेडकरजी ने महत्वपूर्ण उद्‌बोधन करते हुए कहा था, "भारत शताब्दियों के बाद स्वाधीन हुआ है। अब इस स्वराज्य की रक्षा हमारा प्रथम कर्तव्य है। अपने समाज में किसी प्रकार की फूट पुनः हम से स्वराज्य छीन लेगी। शताब्दियों की गुलामी के परिणामस्वरूप हम में कुछ विकृतियां, उच्चनीच भेद, आर्थिक विषमता, पिछड़ापन, जातिवाद आदि उत्पन्न हुए होंगे। परन्तु इन्हें अपना हथियार बनाकर कोई विदेशी हमारे स्वत्व का अपहरण करना चाहेंगे तो हम उसे सहन नहीं करेंगे, उनकी यह आकांक्षा हम मिट्टी में मिला देंगे। यह

हमारा घरेलू मामला है, इसे हम आपस में निबटेंगे। अपने लाभ मात्र के लिये या सामाजिक दृष्टि से अवनति की स्थिति से निकलने के लिये हम कोई विदेशियों के हस्तक बनने वाले नहीं हैं। हमें अपने में उत्पन्न होने वाले जयचन्दों से सावधान रहना होगा। अपने इस राष्ट्र के हम सभी अंग-उपांग हैं, इस के हित को हम ठीक प्रकार से पहिचानें, यही आवश्यक है।" इसी प्रकार आंबेडकर जी ने मृत्यु के कुछ ही दिन पूर्व काठमांडू में बौद्ध सम्मेलन में दिया हुआ भाषण एक सार्वजनिक मृत्युपत्र (Public Testament) के रूप में सभी राष्ट्रभक्तों को सदैव स्मरण करने योग्य है, जिस में उनकी श्रद्धायें, मान्यतायें, वेदनाएं, स्वप्न, आदर्श सब कुछ प्रकट होता है। इस प्रकार राष्ट्रीयत्व के सम्बन्ध में उनकी भूमिका दृढ़ एवं विशुद्ध थी। विगत कुछ शताब्दियों की कुरीति एवं रुढ़ियों के कारण पिछड़े हुए बन्धुओं पर हुए अन्याय का निराकरण करने समाज को आगे आना होगा, उस हेतु आन्दोलन छेड़ने होंगे, यह उनका आग्रह था, किन्तु वह एकराष्ट्रीयता की कीमत पर नहीं।

● समस्या के कारण एवं उपाय

अस्पृश्यता कैसे प्रारम्भ हुई, कब हुई, किसने की, किन जातियों ने इसे बढ़ाया इन बातों पर चर्चा, विश्लेषण होता रहता है, जो रोग के ठीक निदान के लिये आवश्यक भी है। किन्तु साथ-साथ इलाज के बारे में भी सोचा जाना चाहिये। आज की बदलती हुई सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थिति में मात्र नकारात्मक चर्चा असंगत प्रतीत होगी। आज अपने देश में औद्योगिक तंत्रशास्त्र (Industrial Technology) का प्रारम्भ हो चुका है। इसका परिणाम अस्पृश्यता एवं गरीबी की समस्या पर क्या कैसे होगा इस पर गहराई से विचार होना चाहिये। शहरों में आज नये बड़े उद्योग–प्रतिष्ठानों में सभी प्रकार के, भिन्न-भिन्न जातियों के, सभी छोटे बड़े स्थानों से लोग एकत्रित होते हैं, एक जगह काम करते हैं। केन्टीन में चाय पीते समय सभी के साथ घुल मिल जाते हैं। देहात में लौटने पर जातपात फिर मानते भी होंगे, किन्तु शहर की उधेडबुन में भूलते हैं। तंत्रशास्त्र बदलने के माथ-साथ नयी रचना आ रही है, सामूहिक भावना, एकता के नये अर्थ सामने आ रहे हैं (Group Consciousness and Sense of belonging), समान हित सम्बन्ध (Common interests) उत्पन्न हो रहे हैं। इस परिवर्तनों का ख्याल न करते हुए मनुस्मृति की होली जलायें या उस की पूजा करें इस वादविवाद में बुद्धिनिष्ठ लोग यदि उलझे रहे, तो उनकी वह चर्चा असंगत होगी; तब तक उधर वातावरण बदलेगा और जाति संस्था कालबाह्य हो भी जायगी। प्रथम औद्योगिक क्रांति के पश्चात् "अकुशल एवं कुशल" कर्मचारियों के वर्ग के आधार पर मार्क्स ने कुछ सिद्धान्त यूरप में प्रतिष्ठित किये। दूसरी औद्योगिक क्रांन्ति के कारण तंत्रशास्त्र एवं उत्पादन व्यवस्था में परिवर्तन आया, और उसमें से जो नया "तज्ज्ञ वर्ग" (Knowledge-Class) निर्माण हुआ उसके सन्दर्भ में मार्क्स का पूर्व विश्लेषण काल–बाह्य हुआ। अतएव "जातिभेद नष्ट करो" का नारा लगाते रहने के बदले, बदलती हुई समाज रचना में कौन से नये शुभ लक्षण (assets) उत्पन्न हो रहे हैं, उनका अध्ययन कर, समाज में एकात्मता लाने हेतु कौन से समान उद्देश्यों की नये सिरे से प्रतिष्ठापना की जाय

इस पर विचार करना पीडित एवं पिछड़े हुए बन्धुओं की समस्याएं सुलझाने के लिये आवश्यक होगा। नया जन संगठन, नया एकात्म भाव, नयी अपनत्व की जागृति किस आधार पर करना इसके स्पष्ट विचार से ही मार्ग प्रशस्त होगा।

१९३५ के भारतीय कानून के प्रावधान जातिवाद, प्रान्तवाद, आदि को बढ़ावा देने वाले थे। राजनीति में चुनावों की वर्तमान प्रक्रिया भी इन भेदों को प्रोत्साहन देने वाली है। एकात्म समाजशक्ति की निर्मिती में यह बड़ा भारी व्यवधान अवश्य है, जिस पर गम्भीरता से विचार होना आवश्यक है। फिर दूर दृष्टि से सोचना होगा, रचनात्मक विचार करना होगा, चुनावी राजनीति से ऊपर उठ कर समाजहित की स्थायी भूमिका समक्ष रखनी होगी, जिस में प्रारंभ में दिये कुछ शुभ लक्षण अवश्य सहायकारी सिद्ध होंगे।

कम्युनिज्म का खतरा

इस दृष्टि से डा० आंबेडकर जी का स्मरण फिर एक बार आता है। मेरा सौभाग्य है कि मुझे उन्हें केवल निकट से देखने का ही नहीं, प्रत्यक्ष वार्तालाप एवं विचार विनिमय का भी अवसर मिला, जिसमें उनके विशुद्ध राष्ट्रीय एवं रचनात्मक दृष्टिकोण का परिचय प्रचुर मात्रा में मिलता था। उन्होंने बौद्ध मत का स्वीकार करने के कुछ दिन पूर्व मैंने उन्हें पूछा, "अतीत में अस्पृश्यता एवं अन्य कई प्रकार से अन्याय और अत्याचार हुए, किन्तु आज हम कुछ युवक उन दोषों को दूर करते हुए एक स्वस्थ समाज रचना खड़ी करने के लिये प्रयत्नशील हैं, इस बात पर क्या आपका ध्यान आकृष्ट हुआ है ?"

उन्होंने कहा, "तुम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की बात कर रहे हो ?" उन्हें मालूम था कि मैं संघ-प्रचारक था। आगे कहा, "तुमको ऐसा लगता है कि मैंने इस पर कुछ भी नहीं सोचा होगा ?"

"मुझे ऐसा नहीं लगता–" मैंने कहा।

"फिर बताओ," वे कहने लगे, "१९२५ में तुम्हारा संघ प्रारम्भ हुआ। आज २७–२८ वर्ष बाद तुम्हारी संख्या, मान लो, सत्ताईस–अठ्ठाईस लाख होगी। इस हिसाब से इस विशाल समाज को एक सूत्र में बांधने के लिये कितना समय लगेगा! –मैं जानता हूं कि रेखागणिती प्रगति (Geometrical progression) का हिसाब अलग होता है–फिर भी बहुत समय लगेगा। तब तक परिस्थिति रुकने वाली नहीं। और मैं भी तब तक कहां रहूंगा ? मेरे सामने तो एक मुख्य प्रश्न है कि, मेरे जाने के पहले मुझे मेरे समाज को कुछ निश्चित दिशा (Definite direction) देना होगी।"

"मेरे लोग आज तक दलित, पीड़ित, शोषित रहे हैं–" उन्होंने आगे कहा, "अब उनमें कुछ जागृति आ रही है, जिसके कारण कुछ आक्रोश, क्रोध, जोश भी स्वाभाविक ही है। इस प्रकार के लोग बहुत जल्दी कम्युनिज्म का भक्ष्य (Cannon-fodder of Communism) बन सकते हैं। किन्तु मैं नहीं चाहता कि मेरा समाज (अनुसूचित जातियां) कम्युनिज्म का शिकार बने। अपने राष्ट्र की दृष्टि से मुझे कुछ

दिशा बदल कर उन्हें मार्ग दिखाना होगा। आप लोग भी संघ के द्वारा राष्ट्रहित में प्रयास कर रहे हैं। मैं फिर भी समझता हूं कि यदि मैंने मेरे लोगों को दिशा नहीं दी, और यदि वे कम्युनिज्म की ओर मुड़ गये, तो शायद तुम लोग उन्हें राष्ट्रीय धारा में फिर से नहीं ला पाओगे। क्योंकि सही-गलत का सवाल ही नहीं, तुम कह रहे हो इसीलिये मेरे लोग तुम्हारी बात शायद सुनेंगे नहीं !

"अतएव जाने के पकले मुझे सारी व्यवस्था करना है। याद रखो, दलित लोगों और कम्युनिज्म के बींच आंबेडकर एक अवरोध बन कर खड़ा है, और शायद वैसे ही सवर्ण हिन्दुओं और कम्युनिज्म के बीच गोलवलकर जी भी अवरोध रूप खड़े हैं। (Between Sheduled castes and Communism, Ambedkar is the barrier and between caste Hindus and Communists Golwalkar may be a barrier)।"

आत्मीयता

यह सम्पूर्ण शब्दशः (Verbatim) बातचीत मैंने इसलिये यहां पर उद्घृत की है कि दलित, पीडित, शोषित बन्धुओं की समस्याओं के प्रति, उन पर हुए अन्याय-अत्याचारों के बारे में पूरी आत्मीयता से (उपकारकर्ता की (Patronising) दृष्टि से नहीं) विचार करते हुए उसका राष्ट्रीय हल कैसे किया जाय इस पर इसमें सुस्पष्ट मार्ग-दर्शन प्राप्त होता है। यह सारा विचार करते हुए अन्त में डा० आंबेडकर जी ने भिन्न-भिन्न प्रलोभनों को ठुकराते हुए, बौद्ध मत भारतीय होने के कारण उसे ही अपनाने में अपने समाज के राष्ट्रीयता में आघात (De-Nationalisation) नहीं पहुंचेगा, इतना दूरदर्शी विचार रखा। इसी प्रकार की रचनात्मक भूमिका की आज महती आवश्यकता है।

ढाई अक्षर प्रेम के–

"उच्च ध्येय" सामने होने पर छोटे-छोटे विभेद समाप्त हो जाते हैं यह संसार का अनुभव रहा है। "प्रेम" के आधार पर ही पीडित बन्धुओं की पीड़ा दूर हो सकेगी। हमारा राष्ट्र सनातन है। प्रगति–अवनति, सुख-दुख के कई दौर हमने झेले हैं, फिर भी राष्ट्र रूप में हम विद्यमान हैं, क्योंकि संकटों से नष्ट होने के लिये इस राष्ट्र का निर्माण हुआ ही नहीं। यदि हम समझदारी से काम लें, व्यक्तिवाद एवं स्वार्थ पर अंकुश लगायें, तो परम वैभव के सुदिन शीघ्र प्राप्त होंगे। अपने राष्ट्र में एक आन्तरिक क्षमता (inherent strength) है, जो सभी कठिनाइयों एवं विघटनकारी शक्तियों पर विजय प्राप्त करेगी एवं फिर से एकात्मता स्थापित करेगी। इस आत्मविश्वास से भरपूर तपश्चर्या करने वाले, सारे समाज को प्रेम से दोनों हाथों से अपनाने वाले कार्यकर्ता निश्चय ही यश प्राप्त करेंगे।

● श्रमिकों की स्थिति

विगत ३० वर्षों से, श्रमिक वर्ग को औद्योगिक अशान्ति के लिये सर्वथा दोषी मानना, एक फैशन बन गया है। पर यह कभी नहीं माना गया कि निजी क्षेत्र के

व्यवस्थापक आर सार्वजनिक क्षेत्र के अफसर साधारणत: श्रमिकों के मनोविज्ञान को सही प्रकार से समझ नहीं पाते । राष्ट्रीय नीति, योजनायें तथा श्रमिकों से सम्बन्धित उद्योग–नीति निर्धारण करते समय न तो उनके विचार जाने जाते हैं, न ही उनका विश्वास प्राप्त किया जाता है । परन्तु उनसे सरकार एवं व्यवस्थापकों से निष्ठापूर्ण सहयोग करने की अपेक्षा सदैव की जाती है । विश्वास देकर विश्वास प्राप्त होता है, किंतु श्रमिकों के प्रति सरकार द्वारा एक अविश्वास की भावना के कारण मेहनतकशों में स्वाभायिक आक्रोश पनपते गया है । अन्य लोग राष्ट्र के लिए अपना दायित्व पूरा न करें, और मात्र श्रमिकों को सदा देश के लिए त्याग करने की सीख दें, यह उचित नहीं है । आज श्रमिक बड़ी सावधानता से यह देख रहा है कि क्या उद्योगपति, सरकार एवं प्रबन्धक उसके प्रति प्रामाणिक सद्भावना से सोचते हैं ? यदि उसे यह झलक मिलेगी, तो वह निश्चय ही राष्ट्रीय नेताओं तथा सरकार के आवाहन का योग्य प्रतिसाद देगा ।

श्रमिक यह भी जानना चाहेगा कि क्या नियोजक एवं उद्योगपति सभी श्रमिक कानूनों का कारगर रूप से पालन करेंगे ? द्विपक्षीय या त्रिपक्षीय समझौतों तथा बोर्ड के अनुबंधों का, बिना विलंब या संशोधन के, स्वीकार करेंगे ? अनैतिक एवं गैर–कानूनी श्रम-सौदेबाजी निरुत्साहित करेंगे ? स्वेच्छिक समझौते की भावना से उदार तथा सरल श्रमनीति अपनायेंगे ?

यह चिंता का विषय है कि बहुसंख्य कर्मचारियों में एवं श्रमिकों, में (जो संगठित नहीं हैं– या संगठित हैं, फिर भी–) आज असुरक्षा की भावना व्याप्त है । देश का बड़ा श्रमिक तबका आज भी कानून से 'श्रमिक' की परिभाषा में मान्यता प्राप्त नहीं है । औद्योगिक सुरक्षा दल, सेना और पुलिस विभाग के धार्मिक संस्थाओं के, विदेशी सेवा के, अनुबंधित सेवाओं के, ठेकेदारों के कर्मचारियों की समस्याएं भी यथावत विद्यमान हैं । दैनिक मजदूरों का शोषण पूर्ववत जारी है । नियोजित एवं संगठित प्रयास के अभाव में ये सभी प्रश्न कठिन होते जा रहे हैं । यदि हम पूर्ण ईमानदारी से राष्ट्रीय निर्माण में भागीदार होना चाहते हैं, इन समस्याओं के निराकरण हेतु एक नई विचारधारा का निर्माण करना होगा, एक नया दृष्टिकोण अपनाना होगा ।

अश्रद्धा एवं सन्देह

हमारा मौलिक उद्देश्य (Mission) यदि राष्ट्र के पुनर्निर्माण का है, कुछ समस्याएं हल कराने मात्र का नहीं, तो आज मजदूर क्षेत्र का उस दृष्टि से अध्ययन करने पर क्या दिखाई देता है ? सर्वसाधारण मजदूरों की हालत आज यह है कि उनके सामने कोई भी सर्वमान्य नेतृत्व या संगठन नहीं है । अलग-अलग टुकडों में बटा हुआ नेतृत्व कमजोर होता जा रहा है । एक नई प्रक्रिया आज नजर आ रही है कि प्रस्थापित श्रद्धाओं को आज धक्का पहुंच रहा है । कहीं न कहीं श्रद्धा थी, किन्तु पिछले कुछ दिनों के अनुभव के आधार पर सर्वसाधारण मनुष्य सन्देहवादी (Sceptic) बनता जा रहा है । श्रद्धा का भाव कम होता जा रहा है, हरेक व्यक्ति के बारे में, हरेक दल के विषय में, हरेक घटना के सम्बन्ध में अश्रद्धा एवं सन्देह का भाव लोगों के मन में निर्माण हो रहा है । यह अच्छी बात नहीं । यह अश्रद्धा एक छूत की बीमारी होती

है। यदि पुरानी श्रद्धा टूट जाय, जिन के बारे में पहले श्रद्धा थी वह वास्तव में श्रद्धा-योग्य नहीं है ऐसा यदि एक बार लगे तो केवल उस व्यक्ति या संस्था के बारे में मनुष्य की श्रद्धा समाप्त नहीं होती, बाकी सब के ब रे में भी एक अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। इस तरह का सन्देह का भाव लोगों के मन में खड़ा हो सकता है। मैं समझता हूं, देश के लिए यह सबसे बड़ी खतरे की बात है।

यह बड़ा खतरा

इस तरह का संदेहवाद एवं अश्रद्धा का वायुमंडल देश में ज्यादा देर तक रहा तो देश में लोकतंत्र का टिकना तो कठिन है ही, किंतु एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में जिन्दा रहने के लिए जो हिम्मत लोगों में चाहिए वह भी टूट जायगी। यह वातारण केवल लोकतंत्र के लिए ही नहीं राष्ट्रीयता के सभी समर्थकों के लिए एक बहुत बड़ी कठिनाई, एक बहुत बड़ा आव्हान (challenge) है। मैं केवल राजनैतिक दलों की बात नहीं कर रहा हूं। मजदूर संगठन के क्षेत्र में भी यह अश्रद्धा एवं सन्देह का वातावरण चारों ओर फैल रहा है।

किन्तु यह एक आव्हान भी– !

कहते हैं कि (Difficulties do not come alone)–कठिनाइयां कभी अकेले नहीं आतीं। एक बार कहीं छेद हो गया तो वहां दस अनर्थ पैदा हो सकते हैं। किन्तु इस कहावत का दूसरा एक मतलब भी है। कठिनाइयां अकेले नहीं आतीं, इसका मतलब यह भी है कि (they come with opportunities)–वे साथ में आपको काम करने का स्वर्ण अवसर भी लाती हैं। इसी प्रकार आज का अश्रद्धा एवं सन्देह का वातावरण, एक कठिनाई अवश्य है किन्तु राष्ट्रवादी विचारकों के लिए एक अवसर भी है। यानी यह आवश्यक है कि श्रद्धा एवं विश्वास का वातावरण पुनः स्थापित करना। सन्देह के कारण आज जो श्रद्धा का रिक्तक (Vacuum) उत्पन्न हुआ है उस की पूर्ति अपनी राष्ट्रभक्ति, अपनी ध्येयनिष्ठा, अपना चारित्र्य, अपनी निःस्वार्थ बुद्धि, मजदूरों के बारे में अपनी आत्मीयता, अपने अथक परिश्रम आदि के द्वारा राष्ट्र निर्मिति के लक्ष्य को लेकर चलने वाले कार्यकर्ताओं को करना है। उसी से अश्रद्धा के बातावरण में हम पुनः एक ऐसा दृश्य निर्माण कर पायेंगे कि यह राष्ट्रवादी कार्यकर्ताओं का समूह ऐसा है, जो श्रद्धायोग्य है, मजदूरों का समर्थक है और राष्ट्र का भी।

हमारा स्थायी विचार

इस दृष्टि से हम मजदूर संगठन को राजनैतिक संगठन प्रणाली (Political Unionism) नहीं मानते, मात्र आर्थिक संगठन पद्धति (Economic Unionism) भी नहीं मानते। किसी भी राजनैतिक दल के अंग के रूप में काम नहीं करते, न केवल रोटी की समस्या हमारा एकमेव लक्ष्य है। रोटी तो एक लक्ष्य है, उसी के लिये संगठनों का निर्माण होता है। हिन्दुस्थान के ६० प्रतिशत लोग जीवन-रेखा के नीचे हैं जिन्हें खाने को दो बार नहीं मिलता। उन्हें राहत कैसे पहुंचायी जाय, जो

काम कर रहे हैं उन्हें न्यूनतम वेतन कैसे मिलेगा और कम से कम आवश्यक सुविधाएं कैसे प्राप्त होगीं यह बात तो हमारे सामने अवश्य है। किन्तु इसके अतिरिक्त एक बात और है। यह हमारा राष्ट्र है। इसे हम समृद्ध, सम्पन्न, बलशाली बनायेंगे। हम प्रयास करेंगे कि दुनिया में हमारा राष्ट्र प्रथम स्थान पर पहुंचें। आज कोई रूस को, कोई अमरीका को क्रमांक एक मानते हैं और हमारे नेता उधर चक्कर काटते हैं। यह स्थिति बदलकर, दुनिया के किसी भी राष्ट्र को ऐसा कुछ भी करना हो जिसका असर जागतिक परिस्थिति पर हो सकता है तो उन्हें पहले इसकी चिन्ता करना पडे कि भारत का इस पर क्या कहना है, इस प्रकार का संसार का नेतृत्व हमारा भारतवर्ष फिर कर सके इसलिये हम प्रयत्नशील रहेंगे।

राष्ट्र के पीडित, दलित समाज का उद्धार करना उनकी भौतिक समृद्धी का निर्माण करना, शिक्षा की दृष्टि से उन्हें आगे बढ़ाना एक ओर, और आध्यात्मिक मूल्यों के आधार पर संसार का नेतृत्व करने की उनकी क्षमता बढ़ाना यह भी विचार दूसरी ओर करना है। जिस शरीर का आधा हिस्सा पंगु होगा, लूला होगा, वह शरीर कैसे बलशाली होगा ? जिस राष्ट्र का ६० प्रतिशत शरीर पीडित है, दरिद्र–रेखा के नीचे है, वह राष्ट्र अपने केवल १० प्रतिशत पूंजीपतियों और विद्वानों के सहारे संसार में अग्रणी नहीं हो सकता। अतएव शोषित, पीडित, दलित बन्धुओं के प्रति आत्मीयता एवं राष्ट्रीय आकांक्षा, दोनों हमारी मौलिक प्रेरणाएं हैं।

राष्ट्र नीति

इसी दृष्टि से पीड़ित बन्धुओं की समस्याओं पर एवं मज़दूरों की स्थिति पर विचार करते समय हम मांगों के साथ–साथ कर्तव्यों का भी विचार करते हैं। जब कभी समाज पर संकट आता है तो हमारे राष्ट्रवादी कार्यकर्ता अपना स्वार्थ भूल कर राष्ट्रकार्य के लिये अग्रसर होते हैं। १९६२ के चीन के आक्रमण के समय, १९६५ के पाकिस्तान के संघर्ष के समय, १९७१ में बंगला देश की लड़ाई के समय, १९७५–७६ में अन्तर्गत आपात्काल (Emergency) के समय साहस के साथ हमारे कार्यकर्ता खतरा (Risk) उठाते हुए भी समयोचित कार्य करते रहे। कोई पूछते हैं कि जब आपकी राजनैतिक संगठन प्रणाली नहीं है, तो आपने ये सारे काम क्यों किये ? उसका कारण है कि हम राजनैतिक (Political) नहीं हैं, किन्तु हम राष्ट्रनैतिक एवं लोकनैतिक हैं। 'राष्ट्रनीति' यह हमारा स्वभाव (character) है। हम प्रयास रत हैं कि राष्ट्र के पुनर्निर्माण का जो बृहत् प्रयास चल रहा हैं, पीडित, दलित, किसान, मजदूर आदि का कार्य करना उस प्रयास का एक अविभाज्य अंग है, और वह मोर्चा सम्हालना हमारा कर्तव्य है।